उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल।

सिविल पुनरीक्षण संख्या— 110 / 2017

नरेंद्र कुमार अग्रवाल ..... प्रतिवादी / पुनरीक्षणकर्ता

बनाम

देवकी नंदन सर्राफ व अन्य ..... वादी / उत्तरदाता।

अधिवक्ताः श्री प्रिंस चौहान, पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता।
श्री पुलक अग्रवाल, उत्तरदाता के अधिवक्ता।

माननीय शरद कुमार शर्मा, न्यायमूर्ति

प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिका प्रतिवादी की ओर से धारा— 115 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे सी0पी0सी0 के रूप में संदर्भित किया गया है) के अंतर्गत प्रस्तुत की गयी है, जहां प्रतिवादी द्वारा विद्वान न्यायालय सिविल जज (वरिष्ठ प्रभाग) काशीपुर, जिला— उधम सिंह नगर के वाद सं0— 17 / 2014 'देवकी नंदन सर्राफ बनाम नरेंद्र कुमार अग्रवाल अन्य' के मामले में, पारित आक्षेपित आदेश दिनांकित 22—05—2017, जिसमें विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा वाद बिन्दु सं0—7, जो सी0पी0सी0 के आदेश—02, नियम—02 से संबंधित है, को प्रतिवादी के विरूद्ध निस्तारित किया गया था, को चुनौती दी गयी है।

2— मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है कि वादी / उत्तरदाता ने दिनांक 21—01—2014 को एक विवादित संपत्ति के संबंध में एक वाद योजित किया था, उक्त संपत्ति का उल्लेख वाद पत्र के अंत में किया गया है। जिसेमें एक आंगन, सीढ़ी और एक चबूतरे है जिसे वाद पत्र में चित्र EFGHIJ द्वारा चित्रित कर मानचित्र में दर्शाया गया है। डिक्री की प्रकृति, जो वादी द्वारा मांगी गयी थी, व प्रतिवादी के विरूद्ध स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री चाहने बावत एक ''सिम्पलीसिटर सूट'' था, लेकिन वर्तमान पुनरीक्षण याचिका के प्रयोजन के लिए इस न्यायालय के समक्ष अधिक चिंता का विषय यह है कि— यदि वाद में उठाए गए अभिवचन, जो दिनांक 21—01—2014 को योजित किये गये थे, को इसकी समग्रता में विशेष रूप से उन अभिवचनों को ध्यान में रखा जाता है, जो वाद संख्या 20 / 2014 के प्रस्तर सं0— 8 और प्रस्तर— 10 में उठाए गए थे, तो उसमें वादी द्वारा सचेत रूप से अवलोकन कर अभिवचन किया है कि, ''दिनांक 04—12—2013 का जो विक्रय विलेख, विपक्षी संख्या— 5 के पक्ष में निष्पादित किया गया था, उक्त हस्तांतरण की कार्रवाई कानून की दृष्टि से गलत थी और उक्त दस्तावेज एक अप्रभावी दस्तावेज था''। जिसके आधार पर वादी द्वारा

यह कथन किया गया कि प्रतिवादी प्रश्नगत संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकता था।

3— अभिवचन की प्रकृति, जिसे वाद के प्रस्तर सं0— 10 में संशोधित किया गया था, जहां वादी दिनांक 04—12—2013 के विक्रय विलेख के कानूनी प्रभाव के बारे में पूर्व से ही सचेत था, जहां दावा किया गया है, ''विक्रय विलेख के लिए जो प्रतिवाद सं0— 05 को अधिकार प्रदान करना, एक कपटपूर्ण दस्तावेज था या एक गैर—दस्तावेज था''। अर्थात उसमें वादी ने जब उसने 21—01—2014 को वाद योजित किया था, केवल विक्रय विलेख के आधार पर केवल स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के अनुदान के लिए अपने चाहे गये अनुतोष की आधारशिला रखी थी, जिसे तभी शून्य होने का अभिवचवन किया गया था। उस स्थिति में प्रतिवादी के पक्ष में अधिकार सृजित करने वाले दस्तावेज की शून्यता, एक सचेत अभिवचन था जिसे वादी द्वारा वाद संख्या 20/2014 में उठाया गया था, उस समय दिनांक 04—12—2013 के विक्रय विलेख को चुनौती देने के लिए अनुतोष निहीत होने चाहिए थे, लेकिन वादी को सर्वोत्तम अभिवचन से ज्ञात कारणों के लिए, अनुतोष को संशोधित किया गया था और केवल स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के अनुदान के लिए सीमित किया गया था।

4— पूर्ववर्ती वाद विचाराधीन रहने के मध्यवर्ती अवधि के दौरान ही, वादी/उत्तरदाता ने मार्च 2014 में एक और वाद योजित किया, जिसमें उसने दिनांक 04—12—2013 के विक्रय विलेख को विधि की दृष्टि में शून्य के रूप मे रद्द करने के लिए एक डिक्री की याचना की, जो कि सब—रजिस्ट्रार के समक्ष पंजीकृत किया गया था। उक्त वाद जो कि विक्रय विलेख को रद्द करने के लिए योजित किया गया, वाद सं0— 17/2014 के रूप में क्रमांकित है, में विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद बिन्दु विरचित किये, और एक प्रमुख वाद बिन्दु, जो कि विचार का विषय था और जिसे पुनरीक्षणकर्ता द्वारा प्रारंभिक रूप से बल दिया गया था, का वाद बिन्दु संख्या— 07 था, कि ''क्या पश्चात्वर्ती वाद सी0पी0सी0 के आदेश—02, नियम—02 के तहत निहित प्रावधानों द्वारा वर्जित था या नहीं?''

5— विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा उक्त वाद बिन्दु को प्रतिवादी/पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध निर्णित किया था, जो चुनौती के अधीन है। पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा जो निश्कर्ष और तर्क दिये गये थे व सी0पी0सी0 के आदेश—02, नियम—02(3) के तहत निहित प्रावधानों के तहत नहीं दिये गये जो कानून की दृष्टि से गलत है क्योंकि पूर्ववर्ती योजित वाद संख्या 20/2014, दिनांकित 04—12—2013 का वाद विक्रय विलेख पर आधारित था। उस स्थिति में, जब विक्रय विलेख के उपयुक्तिता की जानकारी और उसके दोषपूर्ण निष्पादन की जिम्मेदारी वादी को थी, स्वयं जब उसके द्वारा पहला वाद योजित किया गया था और विशेष रूप से इसके निष्पादन के औचित्य से संबंधित पैराग्राफ को उपरोक्त संदर्भित

वादपत्र में स्वयं अभिवचन उठाया गया था, यह उस स्थिति में था, उस चरण में, जब पहला वाद योजित किया गया था, वादी को विक्रय विलेख को रद्द करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए थी, जिसे स्वीकार किया गया था कि वह शून्य है। परंतु ऐसा नहीं किया गया। इसलिए, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा निर्णित वाद बिन्दु सं0—07 का आक्षेपित आदेश द्व ारा जिस मुद्दे पर निर्णय किया गया है, यह न्यायालय विचारण न्यायालय के उस तर्क से इस कारण से सहमत नहीं है क्योंकि जो संदर्भ विचारणीय न्यायालय द्वारा अपने निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय के न्याय निर्णय केस 141 अलका गुप्ता बनाम नरेंद्र कुमार गुप्ता, (2010)10 एससीसी के प्रतिपादित सिद्धान्त के सापेक्ष दिया है तथा जो अपवाद अवधारित कर आपेक्षित आदेश में उल्लेखित किया है कि भिन्न और विशिष्ट वाद कारण के संबंध में सी0पी0सी के आदेश—02 नियम—02 के तहत कोई वाद वर्जित नहीं होगा। इस मूल सिद्धांत से जो कि भिन्न वाद कारण के संबंध में है, पर कोई संदेह नही किया जा सकता है। लेकिन यह स्थिति एक विषय वस्तु नहीं हो सकती है जो मामले की वर्तमान परिस्थितियों में विचार करने योग्य नहीं होगी क्योंकि वादी/उत्तरदाता के लिए यहां वाद का कारण तब होता, जब उसके द्वारा दिनांक 21—01—2014 को पहला वाद दायर किया गया था, जब दिनांक 04—12—2013 के विक्रय विलेख के औचित्य और इसकी शून्यता से संबंधित एक सचेत दलील दी गई होती, ऐसा नहीं करने पर सी0पी0सी0 के आदेश— 02 नियम— 2(3) के तहत निहित सिद्धांत स्पष्ट रूप से लागू हो जाएंगे। मामले की गंभीरता के प्रयोजनों हेतु, सी0पी0सी0 के आदेश— 02 नियम— 2(3) के तहत निहित प्रावधानों को यहां उल्लेखित किया गया है—

> ''2. **वाद के अन्तर्गत सम्पूर्ण दावा होगा—** (1) हर वाद के अन्तर्गत वह पूरा दावा होगा जिसे उस वाद—हेतुक के विषय में करने का वादी हकदार है, किन्तु वादी वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने दावे के किसी भाग का त्याग कर सकेगा।
>
> (2) दावे के भाग का त्याग— जहाँ वादी अपने दावे के किसी भाग के बारे में वाद लाने का लोप करता है या उसे साशय त्याग देता है वहाँ उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए या त्यक्त भाग के बारे में वाद नहीं लाएगा।
>
> (3) कई अनुतोषों में से एक के लिए वाद लाने का लोप— एक ही वाद—हेतुक के बारे में एक से अधिक अनुतोष पाने का हकदार व्यक्ति ऐसे सभी अनुतोषों या उनमें से किसी के लिए वाद ला सकेगा, किन्तु यदि वह ऐसे सभी अनुतोषों के लिए वाद लाने का लोप न्यायालय की इजाजत के बिना करता है तो उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए किसी भी अनुतोष के लिए वाद नहीं लाएगा।

6— विधायिका ने सचेत रूप से सी0पी0सी0 के आदेश 2 के उप नियम (3) को इसके

अवलोकन में शामिल किया है, कि जब एक ही वाद कारण के संबंध में कई अनुतोष, जो वादी/उत्तरदाता को उपलब्ध थीं जबकि पहला वाद स्थापित किया गया था, यदि वादी, अपने अधिकारों का त्याग करता है या जानबूझकर वाद कारण को चुनौती देने से चूक जाता है, जो वास्तव में उस समय उपलब्ध था जब पहला वाद ही स्थापित किया गया था, जो कि मौजूदा मामले में शामिल वाद बिन्दु है, जो कि स्वयं में विक्रय विलेख को चुनौती दिया जाना हैं, जो पहले के वाद में खुद को संदर्भित करता है, इसलिए, कई अनुतोषों में से एक के लिए वाद करने की चूक, जो तब उपलब्ध थी, सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2 के उप नियम (3) के निहितार्थ को आकर्षित करेगी।

7— प्रतिवादी/पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों का उल्लेख किया था, जिन पर यहां विचार किया गया था। उस स्थिति में, मेरा विचार है कि वादी/उत्तरदाता की ओर से विक्रय विलेख को चुनौती देने के अधिकार का पूर्ण त्याग है, जब दिनांक 21—01—2014 को पूर्ववर्ती वाद, विक्रय विलेख को चुनौती का अनुतोष उपलब्ध था, इसलिए टिप्पणीयां, जो कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय की सिविल अपील संख्या 5527/2014 कॉफी बोर्ड बनाम मैसर्स रमेश एक्सपोर्ट्स प्रा0, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 09—05—2014 को दिए गए निर्णय के अनुसार पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने पैरा 11 का उल्लेख किया है, जिसे यहां नीचे उल्लेखित किया गया है :—

> ''11. आदेश 2 नियम 2 की रोक वहां लागू होती है जहां वाद हेतुक, जिस पर पिछला मुकदमा दायर किया गया था, बाद के मुकदमे का आधार बनता है और जब वादी बाद के मुकदमे में मांगी गई अनुतोष का दावा कर सकता था, पहले के मुकदमे में और दोनों मुकदमे एक ही पक्ष के बीच हैं। इसके अलावा, आदेश 2 नियम 2 के तहत अवरोध का वाद में प्रतिवादी द्वारा विशेष रूप से अनुरोध किया जाना चाहिए और विचारण न्यायालय को विशेष रूप से उस संबंध में एक विशिष्ट वाद बिन्दु तैयार करना चाहिए, जिसमें याचिका पहले के मुकदमे में अभिवचन की जांच की जानी चाहिए और वादी को यह प्रदर्शित करने का अवसर दिया जाना चाहिए कि बाद के मुकदमे में वाद हेतुक अलग है। यह इस न्यायालय द्वारा अल्का गुप्ता बनाम नरेंद्र कुमार गुप्ता (सुप्रा) में निर्धारित किया गया था, जिसमें इस निर्णय का उल्लेख इस न्यायालय के गुरबक्स सिंह बनाम भूरालाल [4], में पारित आदेश में किया गया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था किः
>
> ''6. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2 नियम 2(3) के तहत रोक की याचिका करने वाले प्रतिवादी को सफल होनी चाहिएः (1) कि दूसरा मुकदमा उसी के संबंध

में था, वाद हेतुक जिस पर पिछला मुकदमा आधारित था (2) उस वाद हेतुक के संबंध में वादी एक से अधिक अनुतोष का हकदार था। (3) कि इस प्रकार एक से अधिक अनुतोष का हकदार होने के कारण वादी ने न्यायालय से प्राप्त अनुमति के बिना उस अनुतोष के लिए वाद दायर करने से हटा दिया गया जिसके लिए दूसरा वाद दायर किया गया था। इस विश्लेषण से यह देखा जाएगा की प्रतिवादी को प्राथमिक रूप से और प्रारम्भ में सही वाद कारण को स्थापित करना होगा, जिस पर पिछला मुकदमा दायर किया गया था, जब तक कि वाद हेतुक के बीच पहचान न हो, जिस पर पहले का मुकदमा दायर किया गया था। और जिस पर बाद के मुकदमे में दावा आधारित है, तब तक रोक के आवेदन की कोई गुंजाइश नहीं होगी।''

8— वास्तव में यदि सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2 के निहितार्थ, जिस पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कॉफी बोर्ड (सुप्रा) के मामलों में विचार किया गया है, उक्त मामले में, यदि उस पर विचार किया जाता है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उसमें उपयोग की गयी भाषा का प्रभाव यह था कि जब पूर्ववर्ती वाद का ''वाद कारण'' एक कारण पर आधारित है, जो तब वास्तव में उस समय प्रचलित था, जिसे बाद में एक वाद में मुकदमे को दायर करके उत्तेजित करने की मांग की जा रही है, तो सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2(3) के तहत रोक को आकर्षित करेगा। वास्तव में मैं पैरा 11 में निर्धारित अनुपात के साथ सहमत हूं, जो पहले से ही ऊपर दिए गए कारणों से है और वर्तमान मामले में लागू होगा।

9— इसके विपरीत प्रतिवादी/उत्तरदाता के विद्वान वकील ने सर्वोच्च न्यायालय के मामले रत्नावती और अन्य बनाम कविता गणशमदास (2015) 5 एससीसी 223 में दिए गए निर्णय का उल्लेख किया और उस पर आधार बनाया था और विशेष रूप से इस न्यायालय का ध्यान उक्त निर्णय के पैरा 36 की विषय वस्तु की ओर आकर्षित किया है, जिसे यहां निम्नलिखित रूप से उल्लेखित किया गया हैः—

''36. पुनः अन्य वाद श्रीमती चांद रानी बनाम श्रीमती कमल रानी में इस न्यायालय ने उपरोक्त दो मामलों में निर्धारित कानून पर भरोसा रखते हुए एक ही विचार रखा। इसी प्रकार अधिक विस्तार के साथ इसी तरह के दृष्टिकोण, के.एस. विद्या नदम और अन्य बनाम वी0 वैरावन, मामले में निम्नानुसार उदधृत किया गया थाः ''10. कुछ प्रारंभिक अंग्रेजी निर्णयों के बाद, भारतीय अदालतों द्वारा लगातार यह अभिनिर्धारित किया गया है, कि अचल संपत्ति से संबंधित विक्रय के समझौतानामा के मामले में, समय अनुबंध का सार नहीं है, जब तक कि उस प्रभाव के लिए विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है। वाद दायर करने के लिए परिसीमा

अधिनियम द्वारा निर्धारित सीमा की अवधि तीन वर्ष है। इन दो परिस्थितियों से, यह अनुसरण नहीं करता है कि समझौतानामा के विर्निदिष्ट पालन का वाद भी और प्रत्येक वाद (जो विशेष रूप प्रदान नहीं करता है कि समय अनुबंध का सार है) को डिक्री किया जाना चाहिए, बशर्ते कि यह अनुबंध के भीतर दायर किया गया हो। एक या दूसरे पक्ष द्वारा एक या दूसरा काम करने के लिए समझौतेनामा में पक्षों द्वारा निर्धारित समय सीमाओं का कोई महत्व या मूल्य नहीं है और उनका कोई मतलब नहीं है। क्या यह कहना उचित होगा कि चूंकि समय को अनुबंध का सार नहीं बनाया गया है, इसलिए समझौतानामा में निर्दिष्ट समय–सीमा की कोई प्रासंगिकता नहीं है और इसे दण्ड से मुक्ति के साथ नजरअंदाज किया जाये? इसका अर्थ यह भी होगा कि धारा 10 और 20 दोनों द्वारा न्यायालय में निहित विवेकाधिकार से इन्कार किया जाए। जैसा कि इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने चांद रानी बनाम कमल रानी वाद में कहा था

> 25 .....यह स्पष्ट है कि अचल संपत्ति की बिक्री के मामले में इस बात का अनुमान नहीं है कि समय अनुबंध का सार है। भले ही यह अनुबंध का सार नहीं है, फिर भी न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि इसे उचित समय में निष्पादित किया जाना है यदि शर्तें (स्पष्ट?):
>
> (1) अनुबंध की स्पष्ट शर्तों सेय
>
> (2) संपत्ति की प्रकृति सेय और
>
> (3) आसपास की परिस्थितियों से, उदाहरण के लिए, अनुबंध करने का उद्येश्य।

दूसरे शब्दों में, न्यायालय को समझौते में निर्दिष्ट समय–सीमा सहित सभी प्रासंगिक परिस्थितियों को देखना चाहिए और यह निर्धारित करना चाहिए कि विशिष्ट निष्पादन देने के लिए उसके विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए। अब भारत में शहरी संपत्तियों के मामले में, यह सर्वविदित है कि पिछले कुछ दशकों में उनकी कीमतें तेजी से बढ़ रही हैं– विशेष रूप से 1973 के बाद .....

11. वास्तव में, हम यह सोचने के इच्छुक हैं कि अदालतों द्वारा विकसित नियम की कठोरता उस समय में विकसित अचल संपत्तियों के मामले में अनुबंध का सार नहीं है जब कीमतें और मूल्य स्थिर थे और मुद्रास्फीति अज्ञात थी। आराम, अगर संशोधित नहीं है, विशेष रूप से शहरी अचल संपत्तियों के मामले में। यह कठिन समय है। हम ऐसा करते हैं...

उपरोक्त दृष्टिकोण को के0 नरेंद्र बनाम रिवेरा अपार्टमेंट्स (पी) लि0 में ब रकरार रखा गया था।''

10— वास्तव में यदि उक्त मामले में सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2 के सिद्धांत और पृष्ठभूमि पर विचार किया जा रहा था, तो निर्णय के निहितार्थों की व्याख्या करते समय इस निर्णय को समग्रता में पढ़ा जाना चाहिए न कि टुकड़ों में, विशेष रूप से जब यह न्यायालय, तथ्यात्मक पृष्ठभूमि क्या थी, की अन्देखी नहीं कर सकता है, जिसके तहत सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2 के निहितार्थ थे। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारणीय विषय के रूप में बनाया गया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा उक्त निर्णय के पैरा 2 में तथ्यात्मक पृष्ठभूमि पर चर्चा की गई है, जिसे यहां उद्धृत किया गया हैः—

> ''2. वादी ने दो मुकदमे दायर किए, एक समझौतानामा के विशिष्ट निष्पादन के लिए और दूसरा मुकदमा घर के संबंध में स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए। विचारण न्यायालय ने 16—10—2001 के सामान्य निर्णय और डिक्री द्वारा दोनों वाद खारिज कर दिये। प्रथम अपील न्यायालय, यानी, उच्च न्यायालय, अपील में आक्षेपित फैसले और डिक्री दिनांक 08—09—2011 द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को उलट दिया और प्रतिवादियों के खिलाफ अपील में दोनों मुकदमों का फैसला सुनाया। उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री से व्यथित होकर प्रतिवादी 1 और 3 ने तत्काल दीवानी अपील इस न्यायालय में प्रस्तुत की है।''

11— यह एक ऐसा मामला था, जहां दो मुकदमे दायर किए गए थे, एक मुकदमा स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के लिए था और दूसरा मुकदमा बिक्री के लिए हुए एक समझौतानामा के विशिष्ट प्रदर्शन के संबंध में अनुतोष के लिए दायर किया गया था। दोनों अनुतोष, जो उपरोक्त निर्णय में विचार का विषय थे, पूरी तरह से भिन्न थी और एक दूसरे पर आधारित नहीं थे, क्योंकि एक विशिष्ट निष्पादन की डिक्री के अनुदान के लिए एक मुकदमे में, बिक्री के लिए एक समझौतानामा के संबंध में, अपने आप में स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के अनुदान के लिए एक मुकदमे की संस्थापन को रोकने के लिए कोई मूल अधिकार पैदा नहीं करेगा। निर्णय के पैरा 7 में की गई टिप्पणियों के आलोक में इसे बहुत अच्छी तरह से उचित ठहराया जा सकता है।

12— माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा गुरबक्स सिंह के मामले में दिए गए निर्णय के पैरा— 7 में किये गये अवलोकन, जिसे ए0आई0आर0 (1964) सुप्रीम कोर्ट 1810, पैरा—7 में रिपोर्ट किया गया है, उक्त निर्णय के पैरा 7 को यहां उद्धृत किया गया हैः—

> **7.** आदेश में कि आदेश—2, नियम— 2(3) सिविल प्रक्रिया संहिता, के तहत एक रोक की याचिका, जो प्रतिवादी दायर करता है, उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए (1) कि दूसरा वाद उसी वाद हेतुक के संबंध में था जिस पर पिछला वाद आधारित था, (2) कि वाद हेतुक के संबंध में वादी एक से अधिक अनुतोष का हकदार था,

(3) कि इस प्रकार एक से अधिक अनुतोष के हकदार होने के कारण, वादी ने न्यायालय से अनुमति प्राप्त किए बिना, उस अनुतोष के लिए वाद दायर करने से रोक दिया गया था जिसके लिए दूसरा वाद दायर किया गया था। इस विश्लेषण से यह देखा जा सकता है, कि प्रतिवादी को प्राथमिक रूप से और शुरूआत में सटीक वाद हेतुक स्थापित करना होगा, जिस पर पिछला मुकदमा दायर किया गया था, जब तक कि वाद हेतुक के बीच पहचान न हो, जिस पर पहले का मुकदमा दायर किया गया था और जिस पर बाद के मुकदमे में दावा आधारित है, वहां रोक के आवेदन की कोई गुंजाइश नहीं होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है, एक अनुतोष जो एक दावे की अर्जी में मांगी गयी है, सामान्य रूप से वाद हेतुक एक विशेष कारण के लिए पता लगााया जा सकता है, लेकिन यह किसी भी तरह से नहीं हो सकता है। अर्थात सार्वभौमिक नियम हो। चूंकि याचिका एक तकनीकी बाधा है, इसलिए इसे संतोषजनक ढंग से स्थापित किया जाना चाहिए और इसे केवल आनुमानिक तर्क के आधार पर नहीं माना जा सकता है। यह इस कारण से है कि हम आदेश–2, नियम– 2(3) सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक रोक की याचिका पर विचार करते हैं। आदेश–2, नियम– 2(3) सिविल प्रक्रिया संहिता केवल तभी स्थापित की जा सकती है जब प्रतिवादी पिछले वाद में दलीलों को साक्ष्य के रूप में दर्ज करता है और इस तरह अदालत को दो वादों में वाद हेतुक की पहचान साबित करता है। यह सामान्य आधार है कि सी0एस0 28/1950 में अपीलकर्ता द्वारा आदेश–2, नियम– 2 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत अपनी याचिका के समर्थन में साक्ष्य के रूप में वर्तमान मुकदमे में याचिका दायर नहीं की गई थी। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने, हालांकि, इन अभिवचनों को रिकॉर्ड में रखे बिना यह अनुमान लगाया कि कटौती के मामले के रूप में वाद में निहित पिछले मुकदमे के संदर्भ में वाद हेतुक क्या होना चाहिए था। अपील के स्तर पर विद्वान जिला न्यायाधीश ने अपीलकर्ता के मामले में इस कमी को देखा और हमारी राय में सही बताया, कि पिछले वाद में वादी के बिना रिकॉर्ड पर, आदेश–2, नियम– 2 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक रोक की याचिका पोषणीय नहीं थी। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा, उच्च न्यायालय में विद्वान न्यायाधीश के निर्णय के एक अंश की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया जो इस प्रकार हैः

''वादपत्र, जवाब दावा या पहले की अदालत के निर्णय को सूट के किसी भी पक्ष द्वारा दायर नहीं किया गया है। एकमात्र दस्तावेज जो कि दायर किया गया है वह पहले के मुकदमे में अपील में दिया गया फैसला था। हालांकि, दोनों अदालतों ने स्वतंत्र रूप से पहले के मुकदमे का रिकॉर्ड उद्धृत किया है। पार्टियों के वकील ने भी ऐसा ही किया है। वह फाइल भी इस न्यायालयके समक्ष है''।

13— गुरबख्श सिंह (उपरोक्त) के फैसले में देखा गया है कि सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2 (3) के रोक की दलील, प्रतिवादी के लिए सफल होनी चाहिए, जो अपनी दलील उठाता है और यह बताता है कि दूसरा मुकदमा संबंधित था उसी वाद हेतुक से, जिस पर पिछला मुकदमा आधारित था। वास्तव में यह पहला अपवाद जो गुरबख्श सिंह (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले द्वारा तैयार किया गया था, सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2(3) द्व ारा बाद के मुकदमे को अपने आप में वर्जित कर देगा, क्योंकि वर्तमान में मामला अगर पहले का मुकदमा, चूंकि यह वाद हेतुक पर आधारित था, जो तब वादी/पुनरीक्षणकर्ता के लिए उपलब्ध था, जब उसने 21—01—2014 को पहला मुकदमा दायर किया था, यानी 04—12—2013 के विक्रय विलेख के औचित्य का हवाला देते हुए, वास्तव में वादी/उत्तरदाता का बाद का मुकदमा सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2(3) द्वारा वर्जित होगा। गुरबख्श सिंह के मामले में पारित न्याय निर्णयन द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जिसका संदर्भ प्रतिवादी के वकील द्वारा पैरा— 36 की सामग्री पर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए किया गया है। उपरोक्त कारणों को ध्यान में रखते हुए, मेरा विचार है कि चूंकि पहले का मुकदमा के 14—12—2013 के बिक्री विलेख के फर्जी निष्पादन के तथ्य पर आधारित था, और विशेष रूप से जब बिक्री विलेख के औचित्य के बारे में एक विशिष्ट और सचेत दलील थी, जहां वादी/उत्तरदाता ने खुद को एक शून्य दस्तावेज होने का दावा किया था, यह उस चरण में था, जबकि वादी के पास विक्रय विलेख की औचित्य पर सवाल उठाने का पहला अवसर और वाद हेतुक भी था, परंतु वादी ने प्रतिवादी पर केवल निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा करने का विकल्प चुना है, न कि विक्रय विलेख दिनांक 14—12—2013 बिक्री विलेख के औचित्य के संबंध में, जिसे उसने स्वयं पहले के वाद में एक शून्य दस्तावेज होना स्वीकार किया है। इस प्रकार सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2(3) द्वारा बाद के वाद को वर्जित किया जाएगा। इस प्रकार अधीनस्थ न्यायालय द्वारा, दिये गये कारण जो कि अलका गुप्ता (सुप्रा) के मामले पर आधारित हैं, में दिये गये निर्धारित अनुपात, को वर्तमान मामले में लागू नहीं किया जायेगा।

14— अतः, मुझे निर्णय में कोई वैध कारण नहीं मिला, जैसा कि वाद बिन्दु संख्या—7 को तय करते समय होना चाहिए था। अतः दिनांक 22—05—2017 के आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है। वाद बिन्दु संख्या—7 पर दर्ज निष्कर्षों का उत्तर प्रतिवादी/पुनरीक्षणकर्ता के पक्ष में दिया गया है जो कि पहले से ही ऊपर दिए गए हैं, यह मानते हुए कि वादी/उत्तरदाता द्वारा दायर किया गया बाद का मुकदमा, वाद संख्या 17/2014, जो कि दिनांक 14.12.2013 के विक्रय विलेख को रद्द करने के लिए सी0पी0सी0 के आदेश 2 नियम 2(3) के तहत कानून द्वारा बनाए गए रोक की दृष्टि से कानूनन गलत साबित होगा। उपरोक्तानुसार सिविल पुनरीक्षण याचिका स्वीकार की जाती है तथा आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा निरस्त किया जाता है।

(शरद कुमार शर्मा, न्यायमूर्ति)
14.07.2022